इकाई 12 व्यभिचारी भाव तथा मानसिक स्तर के चार प्रकार

इकाई की रूपरेखा

12.0 उद्देश्य

12.1 व्यभिचारी भाव की परिभाषा जानना।

12.2 व्यभिचारी भाव के भेदों को जानना।

12.3 मानसिक स्तर के प्रकारों को जानना।

12.4 मानसिक स्तर के चार प्रकारों के स्वरूप को जानना।

12.0 उद्देश्य

व्यभिचारी भाव तथा मानसिक स्तर के चार प्रकार केवर्णनों की प्रस्तुत इकाई के अध्ययन से आप :

- व्यभिचारी भाव की परिभाषा जानेंगे।
- व्यभिचारी भाव के भेदों को बताएंगे।
- मानसिक स्तर के प्रकारों का वर्णन करेंगे।
- मानसिक स्तर के चार प्रकारों के स्वरूप को बतायेंगे।
- विकास, विस्तार, क्षोभ, विक्षेप का उल्लेख करेंगे।

12.1 प्रस्तावना

भरतमुनि प्रणीत नाट्यशास्त्र में रसों के उत्पत्ति के तत्त्व विभाव, अनुभाव, व्यभिचारी भावों को विस्तार पूर्वक लक्षण और उदाहरणों को बतलाया गया है। इसी क्रम में उन्होनें व्यभिचारी भावों का भी विस्तार से वर्णन किया है। उनके ग्रन्थ को अध्ययन करने के उपरान्त पता चलता है कि ऐसे तत्त्व या भाव जिनके साक्षात्कार करने से सामाजिक सहृदय के द्वारा उस रस तत्त्व का आस्वादन किया जा सके। इस प्रकार भी व्यभिचारी भाव को परिभाषित किया जा सकता है कि जिन भावों के कारण रस आस्वाद योग्य बनता है ऐसे भावों को व्यभिचारी भाव कहते है। इस इकाई के अन्तर्गत व्यभिचारी भाव की परिभाषा और उसके भेदों का अध्ययन के साथ मानसिक स्तर के चार भावों का अध्ययन भी अपेक्षित है।

12.2 व्यभिचारी भाव लक्षण तथा भेद

भरतमुनि ने नाट्यशास्त्र के सातवें अध्याय में व्यभिचारी भावों का वर्णन किया है। व्यभिचारी भावों को संचारी भाव भी कहा जाता है। ''वि'' तथा ''अभि'' उपसर्ग पूर्वक गत्यर्थक ''चर'' धातु से ''णिनि'' प्रत्यय के संयोग से यह शब्द निष्पन्न होता है। इसकी परिभाषा इस प्रकार प्राप्त होती है कि ऐसे भाव जिनके अभिमुखीकरण के द्वारा रस का आस्वादन किया जा सकता हो वे भाव व्यभिचारी भाव कहलाते हैं। ये व्यभिचारी भाव स्थायी भावों में इस प्रकार रहते हैं जिस प्रकार समुद्र में तरंगे रहती हैं

अर्थात् जिस प्रकार समुद्र में तरंगे उठती हैं और उसी में समाहित हो जाती हैं उसी प्रकार ये संचारी भाव स्थायी भावों में स्थित हाव–भाव के दृश्य के कारण हृदय में उठते हैं और फिर उन्हीं में समाहित हो जाते हैं। चरन्ति पद का तात्पर्य भरत मुनि में नयन्ति अर्थ लिया है जिसका अर्थ है 'ले जाते हैं' – ''चरन्ति नयन्तीत्यर्थः''। रस को सामाजिक के हृदय तक ले जाने वाले तत्त्व ही व्यभिचारी भाव हैं। यथा –

''विशेषादाभिमुख्येन चरन्तो व्यभिचारिणः।
स्थायिन्युन्मग्ननिर्मग्नाः कल्लोला इव वारिधौ।।''

(दशरूपक, 4/7)

इसी बात को साहित्यदर्पणकार विश्वनाथ कुछ इस प्रकार कहते हैं। यथा –

''विशेषादाभिमुख्येन चरणाद् व्यभिचारिणः।
स्थायिन्युन्मग्ननिर्मग्नास्त्रयस्त्रिंशच्च तद्भिदाः।।''

(साहित्यदर्पण, 3/140)

आचार्य भरत मुनि ने 33 व्यभिचारी भावों को कहा है। वे इस प्रकार हैं – निर्वेद, ग्लानि, शङ्का, श्रम, धृति, जडता, हर्ष, दैन्य, औग्र्य, चिन्ता, त्रास, ईर्ष्या, अमर्ष, गर्व, स्मृति, मरण, मद, सुप्त, निद्रा, विबोध, व्रीडा, अपस्मार, मोह, मति, अलसता, वेग, तर्क, अवहित्था, व्याधि, उन्माद, विषाद, उत्सुकता, चपलता। इन व्यभिचारी भावों की संख्या, नाम तथा परिभाषा के विषय में आचार्यों में मतभेद नहीं है। व्यभिचारी भावों का उल्लेख करते हुए धनंजय कहते हैं–

''निर्वेदग्लानिशङ्काश्रमधृतिजडताहर्षदैन्यौग्र्यचिन्ता–
स्त्रासेर्ष्यामर्षगर्वाः स्मृतिमरणमदाः सुप्तनिद्राविबोधाः।
व्रीडापस्मारमौनाः सुमतिरलसतावेगतर्कावहित्था
व्याध्युन्मादौ विषादोत्सुकचपलयुतास्त्रिशदेते त्रयश्च।।''

(दशरूपक, 4/8)

इन्ही व्यभिचारी भावों को काव्यप्रकाशकार आचार्य मम्मट इस प्रकार कहते हैं। यथा –

''निर्वेदग्लानिशङ्काख्यास्तथाऽसूयामदश्रमाः।
आलस्यं चैव दैन्यं च चिन्ता मोहः स्मृतिर्धृतिः।।
व्रीडा चपलता हर्ष आवेगो जडता तथा।
गर्वो विषाद औत्सुक्यं निद्राऽपस्मार एव च।।
सुप्तं प्रबोधोऽमर्षश्चाप्यवहित्थमथोग्रता।
मतिर्व्याधिस्तथोन्मादस्तथा मरणमेव च।।
त्रासश्चैव वितर्कश्च विज्ञेया व्यभिचारिणः।
त्रयस्त्रिंशदमी भावाः समाख्यातास्तु नामतः।।''

(काव्यप्रकाश, 4/31–34)

इन्ही व्यभिचारी भावों को साहित्यदर्पणकार विश्वनाथ ने इस प्रकार निरूपित किया है। यथा –

''निर्वेदावेगदैन्यश्रममदजडता औग्र्यमोहौ विबोधः।
स्वप्नापस्मारगर्वा मरणमलसतामर्षनिद्रावहित्थाः।
औत्सुक्योन्मादशङ्काः स्मृतिमतिसहिता व्याधिसन्त्रासलज्जा
हर्षासूयाविषादाः सधृतिचपलता ग्लानिचिन्तावितर्काः।।''

(साहित्यदर्पण, 3/142)

12.2 व्यभिचारी भाव के भेदों की परिभाषाएँ

व्यभिचारी भाव तैंतीस माने गये हैं। उनकी परिभाषाएं नाट्यशास्त्रीय संबंधी ग्रन्थों में प्राप्त होती हैं। उन्हें यहाँ प्रस्तुत किया जा रहा है।

1. निर्वेद

यह भाव शान्त रस के स्थायी भाव के रूप में जाना जाता है। नष्ट हाने वाले पदार्थ और नष्ट नहीं होने वाले पदार्थ के विवेक ज्ञान से यह प्रकट होता है। यहां यह संचारी भाव के अन्तर्गत प्राप्त होता है तब यह दारिद्र्य, अपमान, अमानवीय भाषा, आक्रोश, ताडना, इष्ट बन्धु बान्धवों के वियोग तथा तत्त्वज्ञान से उत्पन्न होता है। स्त्री पात्र, निम्न कोटि के पात्र और कुत्सित पात्रों के द्वारा इसका अभिनय किया जाताा है। इस भाव का प्रकटीकरण करुण क्रन्दन, हृदय के भर आने के कारण जोर – जोर से श्वसन आदि अन्य क्रिया के द्वारा होता है।

2. ग्लानि

वमन क्रिया, जुलाब होना, रोग होने की स्थिति, तप, नियम, उपवास, सन्तप्त मन, बहुत अधिक कामुक प्रवृत्ति, बहुत अधिक सुरा पान, बहुत अधिक व्यायाम के कारण, अधिक गत्यर्थक कर्म के कारण, भूख, पिपासा, निद्रा के विक्षेप होनी की स्थिति आदि भावों के द्वारा ग्लानि भाव की उत्पत्ति होती है। इस भाव के प्रदर्शन करने वाले शारीरिक विकार इस प्रकार हैं – मन्द्र स्वर से बोलने की क्रिया, नेत्रों का तेज हीन होना, मन्द्र गति से चलने की क्रिया, गालों का पीलापन होना, साहस पूर्वक अशिष्टता, देह का स्थूलता से विपरीत होना, आनन का लज्जा युक्त होना और शरीर के कम्पन्न आदि।

3. शङ्का

चौर्य कर्म के द्वारा धन को प्राप्त करने, राजा का कोई अपराध करने और पाप कर्म करने आदि के द्वारा यह भाव उत्पन्न होता है। इस भाव का अभिनय नट आदि के द्वारा किसी को बार बार देखने से, सकुचानें की क्रिया से, बार बार मुख के सूखने से, दोनों अधरों को जिह्वा की लेह क्रिया से, मुख वैवर्ण्य, कांपना, स्वर परिवर्तन, अधरों का शुष्क होना, भावुक कण्ठ के द्वारा प्रयत्न करने पर भी बोलने की क्रिया न होने पर आदि कारणों के द्वारा किया जाता है।

4. श्रम

अधिक समय तक यात्रा, अधिक व्यायाम आदि के करने पर श्रम नामक व्यभिचारी भाव उत्पन्न होता है।

5. धृति

शौर्य, विज्ञान, विद्या, वैभव, शौचाचार, गुरुभक्ति, अत्यधिक मन के अनुसार धन का लाभ, खेलने आदि विभावों के माध्यम से धृति की उत्पत्ति होती है।

6. जडता

जब कोई मनुष्य किसी भी कार्य को सम्पन्न करने में प्रवृत्त नहीं हो पाता है तो उस मनुष्य की इस प्रकार की स्थिति ही जडता कहलाती है। इष्ट तथा अनिष्ट पदार्थ के देखने से, सुनने से तथा किसी भी प्रकार की व्याधि से ग्रसित हो जाने पर जडता उत्पन्न होती है।

7. हर्ष

सकल मनोरथों की सिद्धि होने पर, इष्ट या प्रेमी के साथ मिलन होने पर, मन में उत्पन्न इच्छाओं की प्राप्ति पर, देवता, गुरु और राजा आदि श्रेष्ठ जनों का कृपा प्रसाद मिलने पर, विविध प्रकार की सम्पत्तियों की प्राप्ति पर यह हर्ष नामक भाव प्रकट होता है।

8. दैन्य

किसी कारण से हुई दुर्गति, मन के सन्ताप के कारण दैन्य भाव की उत्पत्ति होती है।

9. औग्र्य

चौर्य कर्म करने पर सैनिकों के द्वारा पकडे जाने पर, किसी भी प्रकार से राजा के अपराधी होने पर, झूठ बोलने के कारण तथा अनर्गल प्रलाप करने के कारण से यह उत्पन्न होता है।

10. चिन्ता

ऐश्वर्य के नाश होने पर, इष्ट वस्तु से वियोग होने पर, धनादि के नष्ट होन पर प्राप्त दरिद्रता आदि कारणों से चिन्ता नामक भाव उत्पन्न होता है।

11. त्रास

गगन स्थित विद्युत का भूमि पर गिरने से, किसी उल्का पिण्ड का भूमि पर गिरने से, इन्द्रायुध वज्र के पतन से, भूकम्प के आने से, मेघ से उत्पन्न अतितीव्र ध्वनि से, सिंह आदि हिंसक जानवरों के शब्दों के श्रवण से त्रास नामक भाव उत्पन्न होता है।

12. ईर्ष्या

किसी अन्य मनुष्य के सौभाग्य, धन सम्पदा, बुद्धि की प्रबलता, विद्या उपार्जन आदि के प्रदर्शन को देखकर मनुष्य के हृदय में असूया उत्पन्न होती है।

13. अमर्ष

अपने से अधिक विद्यावानों से, ऐश्वर्य सम्पन्न व्यक्तियों से तथा अपने से अधिक शक्तिसम्पन्नों से अपमान को प्राप्त हुए व्यक्तियों में अमर्ष भाव उत्पन्न होता है।

14. गर्व

अपने ऐश्वर्य के कारण, स्वयं की कुलीनता के कारण, सुन्दर रूप लावण्य के कारण, युवावस्था के कारण, शोभनीय विद्या और उपयुक्त बल के कारण मनुष्य के हृदय में गर्व नामक भाव प्रकट होता है।

15. स्मृति

सुख और दुःख से युक्त घटित घटनाओं या बीते क्षण को स्मरण करना ही स्मृति है।

16. मरण

मरण का बहुत अधिक विस्तार भरत मुनि के द्वारा किया गया है। मरण किसी भी कारण से उत्पन्न हो सकता है। मरण के दो प्रकार इनके द्वारा बताए गए हैं प्रथम है रोगजन्य मरण, द्वितीय है अशुभघटना से उत्पन्न मरण। यथा – अचानक घटित किसी दुर्घटना में हुए मरण को अशुभ घटना जन्य मरण कहा जाता है। किसी रोग के कारण हुए मरण को रोग जन्य मरण कहा जाता है।

17. मद

सुरा या मदिरा के पान से मद नामक भाव उत्पन्न होता है। वह तीन प्रकार का होता है – तरुण, मध्य और अवकृष्ट।

18. सुप्त

निद्रा के कारण से उत्पन्न भाव सुप्त भाव है। इस स्थिति में शरीर की सभी इन्द्रियां अपने अपने विषयों के भोग करने से विरत हो जाती हैं। इसमें इन्द्रियों का सम्मोहन, भूमि पर लेट जाना, सिकुडने, फैलने आदि से 'सुप्त' भाव उत्पन्न होता है। इसका अभिनय करने के लिए शरीर चेष्टाओं से रहित, आँखें बन्द, सभी इन्द्रियाँ अपने विषयों में प्रवृत्ति से रहित आदि किये जाते हैं।

19. निद्रा

शारीरिक दौर्बल्य, अधिक श्रम, किसी कारण आए हुए मद, प्राप्त आलस्य, की गयी चिन्ता, मात्रा से अधिक आहार आदि विभावों के कारण निद्रा उत्पन्न होती है।

20. विबोध

निद्रा से रहित भाव ही विबोध है। नींद से जागने पर, किये गये आहार के पाचन क्रिया होने पर, निद्रा में अशुभ स्वप्न के देखने पर, उच्च स्वर से आवाज निकालने पर, किसी के स्पर्श करने पर तथा किसी विशेष प्रकार की ध्वनि के श्रवण करने पर विबोध नामक भाव उत्पन्न होता है।

21. व्रीडा

गुरु आदि श्रेष्ठ जनों की आज्ञा के उल्लंघन से, ली गई प्रतिज्ञा को पूर्ण नहीं कर पाने से, अपमान तथा नहीं करने योग्य कर्म के करने पर बाद में पश्चात्ताप करने से व्रीडा नामक भाव प्रकट होता है।

22. अपस्मार

देव, यक्ष, नाग, ब्रह्मराक्षस, भूत, प्रेत तथा पिशाच आदि के दर्शन से, स्मरण से, उच्छिष्ट भोजन के करने से, जहां कोई नहीं रहता हो ऐसे भवन में शयन करने

से, अपवित्र तथा ऊँचे नीचे अर्थात् उबड़ खाबड़ स्थान पर चलने से, शरीर में स्थित सप्त धातुओं के सन्तुलन के बिगड़ने से अपस्मार नामक भाव उत्पन्न होता है।

23. मोह

अचानक किसी घटित घटना के कारण शरीर में किसी भी प्रकार से आघात होने पर, दुःख की स्थिति में, व्याधि भय के कारण, प्रबल शत्रु के स्मरण हो आने पर आदि कारणों से मोह की उत्पत्ति होती है।

24. मति

विविध प्रकार के शास्त्रों के चिन्तन–मनन करने से, भिन्न – भिन्न विषयों में ऊहापोह करने से यह भाव उत्पन्न होता है।

25. अलसता

परिश्रम के कारण आई थकावट, किसी रोग के कारण शरीर की निर्बलता, गर्भावस्था, श्रम आदि के द्वारा आलस्य उत्पन्न होता है।

26. आवेग

उत्पात अर्थात् देश में संकट की स्थिति उत्पन्न होने पर, अधिक वर्षा के होने पर, अग्नि भय से, हाथी या किसी प्रकार से उत्पन्न उत्पात से, अच्छा लगने वाला और अच्छा नहीं लगने वाला इतिवृत्त के श्रवण से, संकट तथा किसी भी प्रकार के आक्रमण के कारण आवेग नामक भाव उत्पन्न होता है।

27. वितर्क

जब किसी भी प्रकार का सन्देह होता है, किसी विषय का विमर्श होता है इस प्रकार ऊहापोह की स्थिति ही वितर्क कहलाती है।

28. अवहित्थ

विविध प्रकार के भावों का आच्छादन अर्थात् उनके प्रकट होने की दशा में अन्य मानसिक वृत्ति का आश्रय गृहण करना ही अवहित्थ कहलाता है। यह अवहित्थ प्राप्त लज्जा, उत्पन्न भय, पराजय की स्थिति, गौरव, छल या कुटिलत्त्व के कारण उत्पन्न होता है।

29. व्याधि

शरीर में स्थित वात अर्थात् वायु, पित्त अर्थात् भोजन पचाने में उपयुक्त तरल द्रव्य और कफ अर्थात् शीतगुण युक्त पदार्थों के सेवन से उत्पन्न श्वेत या मटमैला पदार्थ जब इन तीनों का शरीर में सन्तुलन अस्थिर हो जाता है तब यह भाव उत्पन्न होता है। ज्वर आदि भेद होने से व्याधि के अनेक प्रकार होते हैं।

30. उन्माद

जो प्रिय जन है उनका जब वियोग हाता है तब, परिश्रम से प्राप्त की गई सम्पत्ति का जब नाश होता है तब, दुःखात्मक आघात होता है तब, वात–पित्त–श्लेष जब कुपित होता है तब उन्माद नामक भाव उत्पन्न होता है।

31. विषाद

पूर्व में संकल्पित किये जाने वाले कार्य के सम्पन्न नहीं होने पर तथा देव विशेष की अनुकूलता के नहीं रहने पर विषाद नामक भाव उत्पन्न होता है।

32. उत्सुकता

जब इष्ट जन का वियोग हाता है और उन के विषय में स्मरण होता है इसके कारण उन प्रिय जनों से मिलन के निमित्त उत्पन्न भाव से तथा उद्यान, देव दर्शन आदि के कारण जो भाव प्रकट होता है वह उत्सुकता कहलाता है।

33. चपलता

किसी व्यक्ति प्रति राग, द्वेष, मात्सर्य, ईर्ष्या की स्थिति तथा प्रतिकूल परिस्थिति होने पर चपलता नामक भाव की उत्पत्ति होती है।

12.3 मानसिक स्तर के चार प्रकार : विकास, विस्तार, क्षोभ, विक्षेप

काव्य के पठन – पाठन या नाटककादि के दृश्य – श्रवण के माध्यम से देखने – सुनने वाले सामाजिक के हृदय में जो रस उत्पन्न होता है उसका जो आस्वादन होता है उस आस्वादन के कारण जिस आनन्द का प्रादुर्भाव होता है उसे ही स्वाद कहा जाता है। इसको हम इस प्रकार से समझ सकते हैं – कोई व्यक्ति अभिज्ञानशाकुन्तल नाटक देख रहा है उस नाटक के अन्तर्गत दुष्यन्त और शकुन्तला के मिलन का अभिनय प्रस्तुत होता है इसमें नायक और नायिका के जो हाव – भाव हैं उनसे सामाजिक दर्शक को श्रृंगार रस की अनुभूति हो रही है इसी क्रम में उसके हृदय में जो विशेष प्रकार का आनन्द उत्पन्न हो रहा है इसी का नाम ही स्वाद है। यह स्वाद चार प्रकार से अभिहित होता है विकास, विस्तार, क्षोभ, विक्षेप। यथा –

स्वादः काव्यार्थसम्भेदादात्मानन्दसमुद्भवः।
विकासविस्तरक्षोभविक्षेपैः स चतुर्विधः।।

(दशरूपक, 4/43)

दशरूपककार का मानना है कि जो चार प्रकार के स्वाद हैं वे नित्य श्रृंगार, वीर, बीभत्स और रौद्र रस में स्थित होते हैं। नाट्यशास्त्रीय रसोत्पत्ति के अनुसार मुख्य चार रसों से ही अन्य चार रसों की सृष्टि होती है इसी सन्दर्भ को यहां प्रस्तुत करते हुए इसी कारिका में आगे इन्होंने हास्य, अद्भुत, भय तथा करुण रस में भी इन चारों स्वादों की स्थिति को दर्शाया है। इस प्रकार क्रम से इन की स्थिति का ज्ञान इस प्रकार होता है कि श्रृंगार तथा हास्य रस में विकास नामक स्वाद रहता है, भय और अद्भुत रस के आश्रय में विस्तार नामक स्वाद रहता है, बीभत्स और भय रस के द्वारा क्षोभ का प्रादुर्भाव होता है, रौद्र तथा करुण रस में विक्षेप नामक स्वाद की स्थिति होती है। इस प्रकार इन आठ रसों में ही इन चार स्वादों की स्थिति का ज्ञान हमें प्राप्त होता है। यथा –

श्रृङ्गारवीरबीभत्सरौद्रेषु मनसः क्रमात्।
हास्याद्भुतभयोत्कर्षकरुणानां त एव हि।।
अतस्तज्जन्यता तेषामत एवावधारणम्।

(दशरूपक, 4/44,45)

12.4 सारांश

रस के आस्वादन में सहायक तत्त्व व्यभिचारी भाव हैं। ये व्यभिचारी भाव जल में निर्मित तरंगों के समान होते हैं। जो उसी में उत्पन्न होते हैं और उसी में समाहित हो जाते हैं। ये व्यभिचारी भाव संख्या में 33 कहे गये हैं। वे व्यभिचारी भाव हैं – निर्वेद, ग्लानि, शङ्का, श्रम, धृति, जडता, हर्ष, दैन्य, औग्र्य, चिन्ता, त्रास, ईर्ष्या, अमर्ष, गर्व, स्मृति, मरण, मद, सुप्त, निद्रा, विबोध, व्रीडा, अपस्मार, मोह, मति, आलस्य, आवेग, तर्क, अवहित्था, व्याधि, उन्माद, विषाद, उत्सुकता, चपलता। भरत मुनि आदि शास्त्रकारों ने इन्हीं भावों को क्रम से नहीं कहा है, उनके क्रम में भेद प्राप्त होता है। मानसिक स्तर के चार प्रकार हैं। रसास्वादन के अन्तराल में जो आनन्द उत्पन्न होता है वह मानसिक स्तर या स्वाद नाम से कहा गया है। वह स्वाद चार प्रकार से होता है – विकास, विस्तार, क्षोभ और विक्षेप।

इस इकाई के अध्ययन के पश्चात् आप व्यभिचारी भाव के स्वरूप तथा भेदों का विवेचन कर सकते हैं। साथ ही मानसिक स्तर के चार प्रकारों – विकास, विस्तार, क्षोभ और विक्षेप को भी समझा सकते हैं।

12.5 शब्दावली

व्यभिचारी भाव – रसों में अनेक रूप से विचरने वाले तत्त्व।

भाव – काव्य में वर्णित नायक आदि के सुख दुःख आदि से सहृदय सामाजिक का तादात्म्य (एकतानता) हो जाना।

12.6 सन्दर्भ ग्रन्थ

1. नाट्यशास्त्र, भरतमुनिकृत, व्याख्याकार बाबू शुक्ल शास्त्री, चौखम्भा संस्कृत संस्थान, वाराणसी, वि. सं. 2065
2. नाट्यशास्त्र, भरतमुनिकृत, सम्पादक मधुसूदन शास्त्री, काशी हिन्दु विश्वविद्यालय, वाराणसी।
3. दशरूपक, धनंजयकृत, हिन्दी टीकाकार डॉ. भोला शंकर व्यास, प्रकाशन चौखम्बा विद्याभवन, वाराणसी।
4. साहित्यदर्पण, विश्वनाथ कविराज प्रणीत, हिन्दी व्याख्याकार, आचार्य लोकमणिदाहाल, डॉ. त्रिलोकीनाथद्विवेदी, आचार्य शिवप्रसाद द्विवेदी, चौखम्बा सुरभारती प्रकाशन, वाराणसी, 2013।
5. काव्यप्रकाश, आचार्य मम्मट प्रणीत, हिन्दी व्याख्यायकार आचार्य विश्वेश्वर, सम्पादक डॉ. नरेन्द्र, ज्ञानमण्डल लिमिटेड, वाराणसी, 2015

12.7 बोध प्रश्न

1. भाव किसे कहते हैं?
2. व्यभिचारी भाव किसे कहते हैं?
3. व्यभिचारी भाव के कितने भेद होते हैं?

4. व्यभिचारी भावों के नाम लिखिए।
5. मानसिक स्तर के कितने प्रकार होते हैं? उनके नाम लिखिए।
6. निम्नलिखित पर टिप्पणी लिखिए– विकास, विस्तार, क्षोभ और विक्षेप।

ignou
THE PEOPLE'S
UNIVERSITY